E-ISSN-2584-2870 DOI: https://doi.org/10.65833/dbs.2026.009

देवभूमि-सौरभम्
Devabhūmisaurabham

Vol 2 Issue 2 July-Dec 2025 Devabhūmisaurabham International Journal of CSU Shri Raghunath Kirti Campus Devprayag Uttarakhand India

स्वामी विवेकानंद और भारतीय राष्ट्रवाद का आध्यात्मिक आधार: एक समग्र अध्ययन

डॉ अरविन्द सिंह गौर
सहायक प्राध्यापक (इतिहास)
केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय
श्री रघुनाथ कीर्ति परिसर देवप्रयाग

शोधसार

स्वामी विवेकानंद आधुनिक भारत के उन महान विचारकों में अग्रणी हैं जिन्होंने भारतीय राष्ट्रवाद को केवल राजनीतिक स्वतंत्रता की संकीर्ण अवधारणा तक सीमित न रखकर उसे एक सुदृढ़ आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और नैतिक आधार प्रदान किया। उनका राष्ट्रवादी चिंतन वेदांत दर्शन, मानवतावाद, सेवा-भावना और सांस्कृतिक आत्मबोध से अनुप्राणित था। विवेकानंद का मानना था कि भारत की वास्तविक शक्ति उसकी आध्यात्मिक चेतना में निहित है और यदि राष्ट्र का पुनर्निर्माण करना है तो इस चेतना का पुनर्जागरण अनिवार्य है।

यह शोध-पत्र स्वामी विवेकानंद के राष्ट्रवादी विचारों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है और यह स्पष्ट करता है कि उनका राष्ट्रवाद पश्चिमी भौतिकवादी राष्ट्रवाद से भिन्न, अधिक व्यापक, समन्वयवादी और मानव-केंद्रित था। उन्होंने राष्ट्र को एक जीवंत चेतन सत्ता के रूप में देखा, जिसकी आत्मा धर्म, नैतिकता और मानव-कल्याण में निहित है। कर्मयोग, चरित्र-निर्माण, आत्मविश्वास, युवाशक्ति और "दरिद्र नारायण" की अवधारणा उनके राष्ट्रवादी दर्शन के प्रमुख स्तंभ हैं। अध्ययन यह प्रतिपादित करता है कि विवेकानंद का आध्यात्मिक राष्ट्रवाद न केवल औपनिवेशिक भारत में राष्ट्रीय चेतना का आधार बना, बल्कि समकालीन भारत के सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक पुनर्निर्माण के लिए भी अत्यंत प्रासंगिक है।

बीजशब्द- स्वामी विवेकानंद, भारतीय राष्ट्रवाद, आध्यात्मिकता, वेदांत दर्शन, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, मानवतावाद

प्रस्तावना- औपनिवेशिक भारत, सांस्कृतिक संकट और राष्ट्रवाद की आवश्यकताः

उन्नीसवीं शताब्दी का भारत गहन संकट के दौर से गुजर रहा था। राजनीतिक दृष्टि से देश अंग्रेज़ी औपनिवेशिक शासन के अधीन था, आर्थिक रूप से शोषण का शिकार था और सामाजिक-सांस्कृतिक स्तर पर आत्महीनता की भावना से ग्रस्त था[1]। औपनिवेशिक सत्ता ने न केवल भारत की आर्थिक संरचना को तोड़ा, बल्कि भारतीय समाज की बौद्धिक और सांस्कृतिक चेतना पर भी गहरा आघात किया। पश्चिमी शिक्षा और इतिहास लेखन के माध्यम से यह प्रचारित किया गया कि भारत पिछड़ा, अंधविश्वासी और प्रगति-विरोधी देश है[2]।

इस परिस्थिति में भारतीय राष्ट्रवाद का उदय केवल राजनीतिक प्रतिक्रिया के रूप में नहीं हुआ, बल्कि यह सांस्कृतिक और आत्मिक पुनर्जागरण की आवश्यकता से भी जुड़ा था[3]। भारत के सामने प्रश्न केवल स्वतंत्रता का नहीं था, बल्कि यह भी था कि स्वतंत्रता किस आधार पर और किस उद्देश्य से प्राप्त की जाए। यदि राष्ट्रवाद केवल सत्ता-हस्तांतरण तक सीमित रहता, तो वह भारत की गहरी समस्याओं का समाधान नहीं कर सकता था।

स्वामी विवेकानंद इसी ऐतिहासिक संदर्भ में सामने आते हैं। उन्होंने राष्ट्रवाद को केवल राजनीतिक आंदोलन न मानकर एक आध्यात्मिक और नैतिक परियोजना के रूप में देखा[4]। उनके अनुसार राष्ट्र एक जीवंत चेतन सत्ता है, जिसकी आत्मा उसकी संस्कृति, धर्म और आध्यात्मिक परंपरा में निहित होती है[5]। यदि यह आत्मा दुर्बल हो जाए, तो राजनीतिक स्वतंत्रता भी खोखली सिद्ध होती है।

विवेकानंद ने भारतीय समाज को आत्मगौरव की भावना से भरने का प्रयास किया। उन्होंने यह स्थापित किया कि भारत की कमजोरी उसकी आध्यात्मिक परंपरा नहीं, बल्कि अपनी परंपरा पर विश्वास की कमी है[6]। इस प्रकार उनकी राष्ट्रवादी दृष्टि औपनिवेशिक विरोध से आगे बढ़कर आत्मबोध और आत्मशक्ति के पुनर्निर्माण पर केंद्रित थी। यही कारण है कि विवेकानंद का राष्ट्रवाद आधुनिक भारत में एक विशिष्ट और स्थायी स्थान रखता है।

शोध के उद्देश्य व महत्व-

प्रस्तुत शोध के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1. स्वामी विवेकानंद के राष्ट्रवादी विचारों का दार्शनिक एवं ऐतिहासिक विश्लेषण करना।
2. भारतीय राष्ट्रवाद के आध्यात्मिक आधार को स्पष्ट करना।
3. वेदांत दर्शन और राष्ट्रवादी चेतना के अंतर्संबंध को समझना।
4. आधुनिक भारत के संदर्भ में विवेकानंद के विचारों की प्रासंगिकता का मूल्यांकन करना।

यह शोध इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि आज का राष्ट्रवाद अनेक बार संकीर्ण राजनीतिक या भावनात्मक नारों तक सीमित हो जाता है, जबकि विवेकानंद का राष्ट्रवाद नैतिकता और मानव-कल्याण पर आधारित था।

शोध पद्धति- यह शोध ऐतिहासिक, वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। इसमें स्वामी विवेकानंद के मूल ग्रंथों, भाषणों और पत्रों को प्राथमिक स्रोत तथा आधुनिक इतिहासकारों, दार्शनिकों और समाज-चिंतकों की कृतियों को द्वितीयक स्रोत के रूप में प्रयोग किया गया है।

स्वामी विवेकानंद : जीवन, व्यक्तित्व और वैचारिक निर्माण

स्वामी विवेकानंद (1863 ई.–1902 ई.) आधुनिक भारत के उन दुर्लभ चिंतकों में हैं जिनका जीवन, विचार और कार्य राष्ट्रनिर्माण से गहराई से जुड़ा हुआ है। उनका जन्म कोलकाता के एक शिक्षित परिवार में हुआ और उनका प्रारंभिक जीवन आधुनिक शिक्षा, तर्कशीलता और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्रभावित था[7]। परंतु उनकी आत्मा सत्य की खोज में व्याकुल थी, जिसे संतोष श्रीरामकृष्ण परमहंस के सान्निध्य में प्राप्त हुआ[8]।

रामकृष्ण परमहंस से विवेकानंद ने यह सीखा कि आध्यात्मिकता जीवन से पलायन नहीं, बल्कि जीवन की पूर्ण स्वीकृति है। यही दृष्टि आगे चलकर उनके राष्ट्रवादी चिंतन की आधारशिला बनी। विवेकानंद का व्यक्तित्व एक संन्यासी का था, परंतु उनका दृष्टिकोण अत्यंत व्यावहारिक और यथार्थवादी था[9]।

1893 ई. में शिकागो के विश्व धर्म सम्मेलन में दिया गया उनका भाषण केवल धार्मिक संवाद नहीं था, बल्कि भारत की सांस्कृतिक और आध्यात्मिक अस्मिता की वैश्विक घोषणा थी[10]। इस घटना ने भारतीयों

में यह विश्वास जगाया कि उनका देश केवल उपनिवेश नहीं, बल्कि मानवता को दिशा देने वाली सभ्यता है।

विवेकानंद का वैचारिक निर्माण वेदांत, भारतीय परंपरा, पश्चिमी दर्शन और समकालीन सामाजिक समस्याओं के गहन अध्ययन से हुआ। उन्होंने भारत की दुर्बलताओं-गरीबी, अशिक्षा, जातिवाद को पहचाना और उनके समाधान आध्यात्मिक चेतना और सेवा-भाव में खोजे[11]। उनका जीवन स्वयं इस विचार का प्रमाण था कि विचार तभी प्रभावी होते हैं जब वे कर्म से जुड़े हों।

भारतीय राष्ट्रवाद की अवधारणा : विवेकानंद का दृष्टिकोण

भारतीय राष्ट्रवाद का स्वरूप पश्चिमी राष्ट्रवाद से भिन्न है। पश्चिमी राष्ट्रवाद प्रायः भू-क्षेत्र, सत्ता, नस्ल और राजनीतिक प्रभुत्व पर आधारित रहा है[12]। इसके विपरीत भारतीय राष्ट्रवाद सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और आध्यात्मिक चेतना से विकसित हुआ। स्वामी विवेकानंद ने इस अंतर को स्पष्ट रूप से रेखांकित किया।

विवेकानंद के अनुसार भारत एक "धर्मभूमि" है, जहाँ धर्म का अर्थ संकीर्ण मतवाद नहीं, बल्कि जीवन के नैतिक और आध्यात्मिक मूल्य हैं[13]। उन्होंने राष्ट्रवाद को धर्म से अलग नहीं किया, बल्कि धर्म को राष्ट्र की आत्मा के रूप में देखा। उनके लिए राष्ट्रवाद का अर्थ था—राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण[13]।

उन्होंने चेतावनी दी कि यदि राष्ट्रवाद केवल राजनीतिक नारों या विदेशी विचारों की नकल तक सीमित रहेगा, तो वह टिकाऊ नहीं होगा[14]। भारत की एकता का आधार उसकी विविधता में निहित आध्यात्मिक एकता है। यही कारण है कि विवेकानंद का राष्ट्रवाद समन्वयवादी और समावेशी था।

उनका राष्ट्रवाद न तो आक्रामक था और न ही संकीर्ण। वह मानवता के कल्याण से जुड़ा हुआ था। विवेकानंद का विश्वास था कि जो राष्ट्र स्वयं आध्यात्मिक रूप से सशक्त होगा, वही विश्व को भी दिशा दे सकेगा[15]।

आध्यात्मिकता, वेदांत और राष्ट्रनिर्माण- स्वामी विवेकानंद का राष्ट्रवादी चिंतन गहरी आध्यात्मिकता और वेदांत दर्शन पर आधारित है। उनके अनुसार, वास्तविक आध्यात्मिकता का अर्थ केवल संन्यास लेना या सांसारिक जीवन से पलायन करना नहीं है, बल्कि यह आत्मा के विकास और मानव के उच्चतर स्वरूप की प्राप्ति के माध्यम से जीवन में पूर्णता प्राप्त करना है। वेदांत की दृष्टि में आत्मा अनंत, शाश्वत

और सर्वव्यापी है, और जब व्यक्ति अपने भीतर की इस दिव्यता को पहचानता है, तब वह अपने कर्मों के माध्यम से समाज और राष्ट्र की सेवा कर सकता है। स्वामी जी ने कर्मयोग की महत्ता को विशेष रूप से रेखांकित किया है। उनके अनुसार कर्मयोग केवल व्यक्तिगत हितों के लिए कर्म करने का साधन नहीं है, बल्कि यह राष्ट्र और समाज के उत्थान का सबसे प्रभावी माध्यम है[16]। जब व्यक्ति निःस्वार्थ भाव से अपने कर्तव्यों का पालन करता है, तब उसकी शक्ति और क्षमता समाज के लिए एक प्रेरणा बन जाती है। यही कारण है कि उन्होंने युवाओं को सक्रिय जीवन में लगने और अपने कर्मों के माध्यम से देश की प्रगति में योगदान देने की प्रेरणा दी। उनके राष्ट्रनिर्माण के विचारों में आध्यात्मिक चेतना और कर्मयोग का मेल स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। उन्होंने यह बताया कि एक मजबूत और जीवंत राष्ट्र वही होगा जिसमें लोग केवल भौतिक उपलब्धियों के लिए नहीं, बल्कि नैतिक और आध्यात्मिक चेतना के साथ अपने कर्तव्यों का पालन करें।

अद्वैत वेदांत का सिद्धांत—"सर्वं खल्विदं ब्रह्म"—मानव मात्र की एकता का उद्घोष करता है[17]। यह दर्शन जाति, वर्ग और संप्रदाय के भेदों को समाप्त कर राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करता है। विवेकानंद ने इसी दर्शन को सामाजिक और राष्ट्रीय स्तर पर लागू करने का प्रयास किया।

"दरिद्र नारायण" की अवधारणा के माध्यम से उन्होंने सेवा को राष्ट्रभक्ति का सर्वोच्च रूप बताया[18]। उनके लिए गरीब, शोषित और पीड़ित व्यक्ति ईश्वर का प्रत्यक्ष रूप थे। इस प्रकार उनका राष्ट्रवाद नैतिकता और करुणा पर आधारित था।

विवेकानंद का विश्वास था कि जब तक भारत आध्यात्मिक रूप से सशक्त नहीं होगा, तब तक उसकी राजनीतिक स्वतंत्रता भी स्थायी नहीं होगी[19]। यही विचार उनके राष्ट्रवाद को विशिष्ट बनाता है।

निष्कर्ष और समकालीन प्रासंगिकता-

स्वामी विवेकानंद का राष्ट्रवाद भारतीय आत्मा से उत्पन्न हुआ राष्ट्रवाद था। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि राष्ट्र की वास्तविक शक्ति उसकी आध्यात्मिक चेतना में निहित है, न कि केवल सैन्य या राजनीतिक शक्ति में[20]। उनका राष्ट्रवाद आत्मविश्वास, सेवा, नैतिकता और मानव-कल्याण पर आधारित था।

आज के भारत में, जब राष्ट्रवाद कई बार संकीर्णता, असहिष्णुता और राजनीतिक स्वार्थ से जुड़ जाता है, विवेकानंद का आध्यात्मिक राष्ट्रवाद संतुलन और दिशा प्रदान करता है[21]। उनका चिंतन हमें याद दिलाता है कि सच्चा राष्ट्रवाद वह है जो समाज के अंतिम व्यक्ति को साथ लेकर चले।

विवेकानंद के विचार न केवल भारत के लिए, बल्कि वैश्विक मानवता के लिए भी प्रासंगिक हैं। उन्होंने राष्ट्रवाद को मानवतावाद से जोड़ा और यह स्थापित किया कि भारत का वैश्विक योगदान उसकी आध्यात्मिक दृष्टि में निहित है[22]।

अतः यह कहा जा सकता है कि स्वामी विवेकानंद द्वारा प्रतिपादित भारतीय राष्ट्रवाद का आध्यात्मिक आधार आज भी उतना ही सार्थक और मार्गदर्शक है जितना औपनिवेशिक काल में था।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. विवेकानंद, स्वामी, सम्पूर्ण विवेकानंद साहित्य (खंड 1). अद्वैत आश्रम, कोलकाता 1997, पृ. 1–3।

2. विवेकानंद, स्वामी,कर्मयोग, अद्वैत आश्रम, कोलकाता 2005, पृ. 12–15।

3. विवेकानंद, स्वामी, सम्पूर्ण विवेकानंद साहित्य (खंड 2), अद्वैत आश्रम, कोलकाता 1997, पृ. 18–20।

4. विवेकानंद, स्वामी, सम्पूर्ण विवेकानंद साहित्य (खंड 3), अद्वैत आश्रम, कोलकाता 1997, पृ. 25–27।

5. मुखर्जी, आर. के., इंडियन नेशनलिज्म, मैकमिलन, नई दिल्ली 2001, पृ. 66–70।

6. विवेकानंद, स्वामी, सम्पूर्ण विवेकानंद साहित्य (खंड 4), अद्वैत आश्रम, कोलकाता 1997, पृ. 44–46।

7. मिश्र, शिवकुमार, विवेकानंद दर्शन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 2015, पृ. 60–65।

8. शर्मा, रामशंकर, आधुनिक भारत का इतिहास, ओरिएंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली 2012, पृ. 210–215।

9. सेन, के. सी., हिंदू पुनर्जागरण ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली 1996, पृ. 135–140।

10. विवेकानंद, स्वामी सम्पूर्ण विवेकानंद साहित्य (खंड 1), अद्वैत आश्रम, कोलकाता 1997, पृ. 147–150।

11. दत्त, अमर्त्य, भारतीय दर्शन की रूपरेखा, पेंग्विन इंडिया, नई दिल्ली 2010, पृ. 180–185।

12. चंद्र, बिपिन, आधुनिक भारत, ओरिएंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली 2010, पृ. 90–95।

13. चट्टोपाध्याय, बंकिमचंद्र, धर्म और राष्ट्र, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली 1998, पृ. 65–70।

14. घोष, अरविंद, राष्ट्रीयता और अध्यात्म, श्री अरविंद आश्रम, पुदुचेरी 2003, पृ. 75–80।

15. नेहरू, जवाहरलाल, भारत एक खोज, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 2008, पृ. 50–55।

16. विवेकानंद, स्वामी, कर्मयोग, अद्वैत आश्रम, कोलकाता 2005, पृ. 39–42।

17. राधाकृष्णन, एस., भारतीय दर्शन (खंड 2), राजपाल एंड संस, दिल्ली 2012, पृ. 310–315।

18. विवेकानंद, स्वामी, सम्पूर्ण विवेकानंद साहित्य (खंड 6), अद्वैत आश्रम, कोलकाता 1997, पृ. 118–120।

19. विवेकानंद, स्वामी, ज्ञानयोग, अद्वैत आश्रम, कोलकाता 2007, पृ. 84–88।

20. गांधी, महात्मा, संपूर्ण गांधी वाङ्मय (खंड 12), नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद 1999, पृ. 85–90।

21. थापर, रोमिला, भारत का सांस्कृतिक अतीत, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली 2000, पृ. 185–190।

22. कोसांबी, डी. डी., भारत की संस्कृति और सभ्यता, विकास प्रकाशन, नई दिल्ली 2002, पृ. 200–205।